बिदेसिया

डॉ. ऐश्वर्या झा

मनुष्य की अपनी पहचान को बनाए रखने की अदम्य आकांक्षा लोक- नाटकों का प्राण-तत्व है। विपरीत परिस्थितियों में भी खुद को जीवित, प्रसन्न रख पाने की जिजीविषा, लालसा ने ही लोक-नाटकों की परंपरा को अविच्छिन्न बनाए रखा। यही कारण है कि इन नाट्य विधाओं को कभी किसी विशेष अलंकरण की आवश्यकता नहीं रही। बिना किसी तामझाम के भी इनकी प्रसिद्धि काल की सीमा से परे रही है। ऐसा ही सामाजिक सन्देश प्रधान लोकनाट्य है बिदेसिया। नृत्य, संगीत और अभिनय से सुसज्जित लोकनाट्य की यह विधा भोजपुरी के शेक्सपीयर 'भिखारी ठाकुर' की देन है। लोक मानस की गहरी समझ होने के कारण भिखारी ठाकुर का यह नाट्य लोकप्रियता और प्रासंगिकता के महनीय और विशेष लोकनाट्यों में शुमार है। भिखारी ठाकुर का संपूर्ण रचना संसार लोक केंद्रित है। बिदेसिया में यह लोकोन्मुखता जीवन के संघर्ष और दुःख से उपजी पीड़ा से सम्पृक्त है। पहला बिदेसिया नाटक को खेले हुए सौ से ज्यादा वर्ष हो चुके हैं। नाटक का नायक बेरोजगारी से मुक्ति पाने परदेश जाता है। प्रश्न यह है कि क्या सदी बीत जाने के बाद भी स्थितियां बदलीं? आज भी पूर्वांचल के लोग बेहतर जीवन, शिक्षा के लिए अपने घरों से दूर नहीं जा रहे? कोरोना महामारी ने प्रवासियों के अंतहीन दुःखों के कारवां पर बरबस ही सबका ध्यान खींचा।

मध्यम वर्ग के पलायन के कारण कुछ और हो सकते हैं किंतु श्रमिक वर्ग अभी भी दो वक्त की रोटी की जद्दोजहद के कारण ही बाहर जाता है। औद्योगिकीकरण, सूचना क्रांति एवं परिवहन की सुविधा ने स्थिति को और भयावह बना दिया है। कारण कोई भी हो इन सबका परिणाम विस्थापन का दंश ही है। सामान्य कथानक में अप्रत्यक्ष रूप से संवेदना के इतने स्तर भिखारी ठाकुर जैसा सिद्धस्त ही जोड़ सकता है। इक्कीसवीं सदी के परिवेश में भी बिदेसिया इन्हीं कारणों से प्रासंगिक है। बिदेसिया पूर्वांचल के लोगों की संस्कृति, रहन-सहन, आचार-विचार का जीवंत दस्तावेज है। तत्कालीन समय में आम जनता की हालत बद से बदतर होने लगी थी। दो वक्त की रोटी जुटाना मुश्किल हो गया था। इस कारण आजीविका और रोजी-रोटी की तलाश में उत्तर प्रदेश एवं बिहार के बहुत से युवक कलकत्ता की ओर पलायन करने लगे थे। शायद ही गावों में कोई ऐसा घर हो जिसका कोई पुरुष सदस्य (पिता, भाई, पति) कमाने बाहर न गया हो। उस समय अधिकतर लोग कमाने के लिए कलकत्ता का रुख करते थे। ऐसे बाहर गए लोगों को बिदेसिया कहा जाता था। ऐसे ही एक युवक (बिदेसिया) और उसकी नवविवाहिता पत्नी की मर्मस्पर्शी कहानी को भिखारी ठाकुर ने प्रस्तुत किया। इस वियोग वर्णन में एक स्त्री के दुःख, संताप का चित्रण तो है साथ ही पलायन की समस्या का यथार्थपूर्ण चित्रण किया गया है। इसमें जहां एक ओर सदियों से पीड़ित समाज की समस्याओं का चित्रण है जो इसे प्रासंगिक बनाता है तो दूसरी ओर लोकधर्मी नाट्य की विशेषताएं इसे विशिष्ट पहचान देती हैं।

औद्यौगिकीकरण, शहरीकरण, भौतिकता की अंधी दौड़ में भोजपुरी संस्कृति की दारुण कथा को दर्शाता है 'बिदेसिया' लोक नाट्य की अनोखी शैली है। भोजपुरी समाज की पीड़ा और उद्वेग ने ही बिदेसिया को जन्म दिया है। बिदेसिया केवल नाट्य शैली नहीं है। अपने पहले प्रस्तुति से ही बिदेसिया भोजपुरी क्षेत्र के नवयुवकों के पलायन एवं उनके विरह में नवविवाहिता स्त्रियों की तकलीफ का मार्मिक दस्तावेज बन गया था। बिदेसिया को पढ़ने देखने के बाद पलायन एवं प्रवास की समस्या मुखर रूप से सामने आती है जहाँ कलकत्ता मात्र महानगर नहीं है बल्कि एक उम्मीद का प्रतीक है। यहाँ पहुँच जाने से बिदेसिया की दुर्दशा में सुधार आएगा किंतु महानगर का शोषण अलग होता है। वर्ण, जाति का भेद यहाँ भी दिखता है। असंगठित श्रम शक्ति का शोषण और आसान हो जाता है।

बिदेसिया तत्कालीन समय और समाज को पुनर्जीवित करने के साथ आज के यथार्थ को उद्घाटित करने का सामर्थ्य रखता है। आज के समय में किसी अन्य स्थान पर जाकर आजीविका तलाशना शायद आश्चर्यचकित नहीं करता किंतु उस समय जब संपर्क के साधन उपलब्ध नहीं थे बाहर गए व्यक्ति से मिलना सपना हो जाता था। उस समय की पारिवारिक स्थिति को समझने का साधन बिदेसिया है।

"पिया मोर गइलन परदेस ऐ बटोही भैया।

रात नाहीं नींद, तनी न चौनवा ऐ बटोही भैया

सहतानी बहुत कलेस ऐ बटोही भैया

रोवत-रोवत हभ भइलीं पगलनियाँ, ऐ बटोही भैया

एको ना भेजवेलन सनेस, ऐ बटोही भैया।"[1]

"अपने सर्वाधिक लोकप्रिय नाटक 'बिदेसिया' को रचते हुए वे कलात्मकता के साथ जीवन की व्याख्या करते हैं और अपने गीतों में विविध छवियों वाले जीवन-यथार्थ को पिरोते हैं। उनकी कलात्मकता उधार ली हुई या गढ़ी हुई नहीं है। इसे वे अपने देशज और पारंपरिक यथार्थ के गर्भ से सिरजते हैं। युगों से चली आ रही विस्थापन की समस्या और प्रवास की पीड़ा को वे परंपरा से नाभिनालबद्ध करते हैं। उनका सिरजा यह दुःख काल और स्थान का अतिक्रमण करते हुए हमारी आत्माओं के अतल में पसर जाता है।"[2]

बिदेसिया का कथानक प्रत्यक्ष रूप से बहुत सरल है। गांव का युवक अपने दोस्त से कलकत्ता (कोलकाता) के विषय में सुनकर कमाने के लिए वहां जाना चाहता है परंतु उसकी नवब्याहता पत्नी इसके लिए सशंकित होकर जाने से मना करती है। पति बहाना बनाकर चला जाता है। वहां जाकर वह दूसरी स्त्री (रखेलिन) पर आसक्त हो दूसरा विवाह कर लेता है। गांव में पत्नी (प्यारी सुंदरी) विरह विदग्धा हो रोती बिलखती रहती है। पति की चिंता उसे सताती है। इसी बीच 'बटोही 'से उसकी मुलाकात होती है जो कलकत्ते ही जा रहा होता है। बटोही उसकी दुर्दशा देख द्रवित होता है और सुंदरी को वचन देता है कि वह उसके पति को ढूंढकर भेजेगा। कलकत्ते में बिदेसी को बटोही ढूंढ लेता है और और उससे सुंदरी की कारुणिक दशा का वर्णन सुन गांव वापस लौटना चाहता है। रखेलिन उसे जाने से रोकती है किन्तु वह

चला जाता है। गांव पहुँच सुंदरी के साथ रहने लगता है उसके पीछे रखेलिन भी अपने बच्चों के साथ वहां पहुंचती है और सब मिलकर खुशी से रहने लगते हैं। बिदेशी, सुंदरी, रखेलिन या रंडी, बटोही मात्र चार पात्रों से भिखारी ठाकुर ने ऐसी कहानी रची है जो प्रवास की पीड़ा को दर्शाता है। आज जब हम कोरोना महामारी को झेल रहे है, कई बार प्रवासियों के दुःख दर्द की तस्वीर को देखा है। आज भी बेहतर जीवन यापन की आकांक्षा लोगों को अपना घर छोड़ने पर मजबूर करती है और दर-दर की ठोकर खाने को मजबूर करती है। बिदेसिया नाट्य आज भी पलायन के उस दर्द को सम्पूर्णता में उभारता है।

आज भी भिखारी ठाकुर ने जिन चीजों को अपने नाटकों में दिखाया था वह आज भी बहुत अधिक नहीं बदले। पहले भी पूर्वांचल में रोजगार एवं बेहतर स्वास्थ सेवा का अभाव था और सूखा-बाढ़ इत्यादि समस्याएं बड़ी संख्या में युवाओं को पलायन के लिए मजबूर करती थीं। बिहार सहित हिंदी पट्टी के राज्य आज भी अन्तर्राज्ययी पलायन में तीन चौथाई हिस्सा रखती हैं। मेहनतकश मजदूरों ने देश दुनिया में अनेक नगर और देश को विकसित बनने में अपनी खून पसीने को बहाया है। कोरोना महामारी के समय उसी नगर एवं शहर से उन्हें भाग के अपने जड़ पर ही आना पड़ा। सरकार ने योजना चलायी पर सरकारी योजना भला योजना से अधिक क्या कर सकती थी। कोरोना थोड़ा शांत हुआ, वापस लौटे लोग फिर कर्ज ले कर ट्रेन के साधारण डब्बों एवं बस में लद लाद कर फिर दिल्ली पंजाब के तरफ भागे। गांव से पलायन कर किसी भी शहर में रोजी रोटी कमाने वाला नौजवान बिदेसी या बिदेसिया कहलाया। दशकों पूर्व शुरू किये गए 'बिदेसिया' की मूल समस्या आज भी जस की तस है गरीबी जनित पलायन। महंगाई ने इस समस्या की भयावहता को कई गुणा बढ़ा दिया है। पलायन करने के बाद भी अधिकांश बिदेसिया को मिलता क्या है? केवल रोटी और कपड़ा, मकान तो कुछ को ही नसीब होता है। बिदेसिया अपने उद्गम के साथ ही पलायन के इस दर्द को उभार रहा है और यही उसकी प्रासंगिकता को सिद्ध करता है। बेशक यह लोकनाट्य भोजपुरी में है लेकिन इसकी संवेदना इसे एक क्षेत्र में तक बाँध कर नहीं रखती। इसकी लोकप्रियता का यही आधार है कि इसमें समष्टिगत संवेदना विद्यमान हैं।

स्त्रियों की दुर्दशा को भी बिदेसिया ने रेखांकित किया गया है। दोनों स्त्री पात्र पुरुषों के धोखे का शिकार होती हैं। पति की अनुपस्थिति में भी प्यारी सुंदरी विवाह-मण्डप में लिए गए सात फेरे की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करती है। जो बंधन प्यारी सुन्दरी को बांधे रखता है, वही बंधन बिदेसी (पुरुष) के लिए अर्थहीन, बेमानी हो जाता है। जब बिदेसी वापस जाने लगता है तो दूसरी स्त्री बिदेसी को जाने नहीं देना चाहती क्योंकि अब बिदेसी से ही उसका भी घर संसार है, दो बच्चे भी हैं। वह बिदेसी से कहती है-

"पिया पिरतिया लगाई के, दूर देस मत जाहू।

कहे भिखारी भीख मांगि के लाइब, तुम खाहू।"[3]

किंतु ये सब भी उसे रोक नहीं पाते। वह उसे अकेला छोड़कर चला जाता है। अंत में दोनों मिलकर खुशी से रहने लगती हैं किंतु क्या स्त्री के लिए क्या यह पीड़ादायक नहीं है। बिदेसिया के माध्यम से यह दिखाया गया कि गरीबी से निजात पाने के लिए दूसरे स्थान जाना सिर्फ भौगोलिक दूरी नहीं थी बल्कि

यह पारिवारिक, सामाजिक दूरी थी। घर से दूर जाकर कही और घर बसाना विस्थापन के दर्द को कम नहीं कर सकता है। तत्कालीन समाज तो परतंत्र था आज स्वतंत्रता के 75 वर्ष बाद भी विस्थापन कहाँ रुक पाया है।

"बिदेसिया शैली की अपार लोकप्रियता का सबसे महत्वपूर्ण कारण इसका परंपरा-स्युत होना ही है। भोजपुरी साहित्य और संस्कृति मूल रूप से मौखिक परंपरा पर आधारित रही है और गेयता इसका स्वभाव रहा है। भोजपुरी के प्रसार में उसकी गेयता, गीतों की बड़ी प्रधानता रही है। आज मॉरीशस, सूरीनाम, ट्रिनिडाड, फिजी, हॉलैंड, साउथ अफ्रीका आदि देशों में अगर भोजपुरी जिंदा है तो बहुत हद तक उसकी गेयता ही है। अमिताभ घोष ने अपनी पुस्तक सी ऑफ दी पॉपीज में इस तथ्य का उल्लेख विस्तार से किया है। वह कहते हैं कि गिरमिटिया मजदूरों में अन्य भाषा भाषियों की भी अच्छी संख्या थी लेकिन जब उनके जहाज उन देशों के समुद्र तटों पर उतरे तो सबकी भाषा भोजपुरी हो चुकी थी। इसका कारण यह है कि भोजपुरी संस्कृति में सामूहिक गान की जबर्दस्त परंपरा रही है। दुनिया के सबसे बड़े कोरस यानी सामूहिक गान की शैली को भोजपुरियों ने ही संजो रखा है- होली और चौता के रूप में। अपने गीतों की बदौलत भोजपुरी अन्य भाषाओं की रानी बन बैठी। ऐसे में यह अन्यथा नहीं कि ठाकुर जी के नाटकों में परंपरा और गेयता का साहचर्य देखने को मिलता है। यही कारण है कि भिखारी ठाकुर के नाटकों के पात्र बहुधा गीतों के माध्यम से ही अपने मनोभावों का इजहार करते हैं।"[4]

उनकी लोकप्रियता को देखते हुए राहुल सांकृत्यायन ने लिखा है। हमनी के बोली में कितना जोर हबे, केतना तेज बा, ई अपने सब भिखारी ठाकुर मे देखिले। लोग के काहे निमन लागेला भिखारी ठाकुर के नाटक ? काहे दस दस पनरह पनरह हजार के भीड़ होला ई। नाटक के देखे खातिर ? मालुम होत ह कि एक एहि नाटक में... हम ई न कह तानी जे भिखारी ठाकुर के नाटक में दोष नइखे। दोष बा त वोकर कारण भिखारी ठाकुर नइखन, वोकर कारण हबे पढुआ लोगन। उ लोग जे अपन बोली से नेह लगाबत भिखारी ठाकुर के नाटक देखत अओ ने कौनो बात सुझाबत त ई कुल दोष मिट जात। भिखारी ठाकुर हमनी के एगो अनगढ़ हिरा हये। उनकरा में कुल गुन बा खाली एने, ओने, तनि, तुनि छाटे के काम हवे। (हमारी बोली मे कितनी तागत है तेजी है यह सब हमे भिखारी ठाकुर के नाटक में दिखता है। लोगों को भिखारी ठाकुर का नाटक क्यों अच्छा लगता है? क्यों दस दस पंद्रह पंद्रह हजार की भीड जुटती है भिखारी ठाकुर के नाटक को देखने के लिए? मालूम होता है कि एक इसी नाटक में... हम यह नहीं कह रहे हैं कि भिखारी ठाकुर के नाटक में दोष नही है। अगर दोष है तो उसका कारण भिखारी ठाकुर नहीं है उसका कारण पढे-लिखे लोग हैं। पढे-लिखे लोग अगर अपनी बोली से स्नेह करते, भिखारी ठाकुर के नाटक देखकर अपनी राय देते तो उनका दोष मिट जाता। भिखारी भोजपुरी का एक अनगढ हीरा है। उनमें सभी गुण हैं केवल थोडी बहुत छांटने की जरूरत है।)"[5]

बिदेसिया का कथानक विशाल भोजपुरी क्षेत्र की आशा आकांक्षा, मनोवृति और रूचि को ही प्रकट नहीं करता बल्कि उसकी कथा, चरित्र से हर एक बिदेसिया आत्मीयता अनुभव करते हैं जो अपनी कथा को इसमें प्रतिविम्बित पाते हैं। यथार्थ का विशद चित्रण, लोकग्राह्यता इसकी लोकप्रियता के आधार हैं जो इसे

काल और सीमा से परे आज भी प्रासंगिक बनाते हैं। भारत की आत्मा गांवों में बसती है। आजादी के 75 वर्षों के बाद आज भी हर गांव में एक नहीं सैकड़ो 'बिदेसिया' है जो बेहतर जीवन के लिए अपने घर से दूर कहीं संघर्षरत है। गांव में विकास के माध्यम से रोजगार, शिक्षा एवं स्वास्थ्य जो एक मानव की आधारभूत जरूरत मुहैया करवाई गयी होती तो शायद ही कोई बिदेसिया बनता। सूचना क्रांति, परिवहन की सुविधा के विकास से पलायन को रोकने का प्रयास होना चाहिए था।

संदर्भ:

1. www.hindisamay.com/content (20 जून को उपलब्ध)

2. हृषिकेश सुलभ, भिखारी ठाकुर का लोक, रंग प्रसंग (41), 2013, पृ 109

3. www.hindisamay.com/content (20 जून को उपलब्ध)

4. http://jagadishwarchaturvedi.blogspot.com (22 जून को उपलब्ध)

5. http://vibhathakum.blogspot.com (22 जून को उपलब्ध)

-डॉ. ऐश्वर्या झा

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग,

स्वामी श्रद्धानंद कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली